

मुकदमों का विवरण

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. नवंबर 28, 2023

(2023 की आपराधिक अपील संख्या 3618)

[विक्रम नाथ और अहसानउद्दीन अमानुल्लाह, जे. जे.] हेडनोट्स

विचार के लिए विषय: क्या उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त को आपराधिक मामले में आरोपमुक्त करने से इनकार करने और प्राथमिकी को रद्द करने का आदेश पारित किया गया है, इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973-एसएस।239-240** - मजिस्ट्रेटों द्वारा वारंट-मामलों की सुनवाई-आरोपमुक्त करने के लिए आवेदन-जांच की अनुमेय सीमा-तथ्यों पर, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को आपराधिक मामले में आरोपमुक्त करने और एक प्राथमिकी को रद्द करने से इनकार-हस्तक्षेप:

आयोजित किया गया: हस्तक्षेप के लिए मामला-कोई संदेह नहीं है, बहुत कम मजबूत या गंभीर संदेह है कि अपीलार्थी कथित अपराध के लिए दोषी हैं। 448, 454 और आई. पी. सी. 380-अपीलार्थियों के खिलाफ आपराधिक मामला अदालत की प्रक्रिया का स्पष्ट दुरुपयोग करने के बराबर है- अपीलार्थियों को एक पूर्ण-स्तरीय आपराधिक मुकदमे का सामना करने के लिए यह अन्यायपूर्ण होगा-अपीलार्थियों को परेशान करने वाले और अनुचित आपराधिक अभियोजन से बचाया जाना चाहिए, और अनावश्यक रूप से अंतिम मुकदमे की कठोरता से बचाया जाना चाहिए, या तो एक एफ. आई. आर./शिकायत को रद्द करके या आरोपमुक्त करने से इनकार करने वाले आदेश के खिलाफ अपील की अनुमति देकर या किसी अन्य कानूनी रूप से अनुमेय मार्ग से, जैसा कि परिस्थितियां हों, उच्च न्यायालयों पर डाला गया कर्तव्य है-उच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करना चाहिए था और अपीलार्थियों को आरोपमुक्त करना चाहिए था-इस प्रकार, उनके खिलाफ आगे बढ़ने के लिए रिकॉर्ड पर पर्याप्त सामग्री नहीं होनी चाहिए।

1071

[पैरा 14, 23, 24] 1072 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 13 एस. सी. आर.

दंड प्रक्रिया संहिता, **1973-एसएस।239-240** - मजिस्ट्रेटों द्वारा वारंट-मामलों की सुनवाई-अभियुक्तों का निर्वहन-आरोप तय करना-मीनाक्षी बाला के मामले पर भरोसा, जिसमें कहा गया था कि आरोप तय करने के चरण में, अदालत संबंधित गुण-दोषों पर विचार करने और निर्णय लेने के लिए निचली अदालत के कार्यों को हड़प नहीं सकती है:

आयोजित किया गया:यदि मीनाक्षी बाला के मामले को इसके रूप में स्वीकार किया जाता है, तो आवश्यक संगत यह होगी कि मामले की विस्तार से जांच करने के बावजूद, एक अदालत आरोपमुक्त करने के आवेदन पर विचार करते समय अपनी स्वतंत्रता को प्रतिबंधित कर देगी-यह एक व्यक्ति को मुकदमे में खड़े होने के लिए मजबूर करने के बराबर होगा, भले ही 'भारी' सामग्री उसकी निर्दोषता की ओर इशारा करती हो-जाहिर है, अदालत के हाथों को बंधा नहीं जाना चाहिए, और स्वतंत्रता के खिलाफ नहीं-इस प्रकार, मीनाक्षी बाला के मामले को सीमित पहलू पर संदेह है, हालांकि, पुनर्विचार के लिए बड़ी पीठ को नहीं भेजा जाता है, यह देखते हुए कि यह एक अधिक उपयुक्त मामले में किया जाएगा-पूर्ववर्ती।[पैरा 18,25]

नगरों और अन्य संदर्भों की सूची

मीनाक्षी बाला बनाम सुधीर कुमार, (1994) 4 एस. सी. सी.[1994] 3 एससीआर 1008-सीमित पहलू पर संदेह।

अजय कुमार घोष बनाम झारखंड राज्य, (2009) 14 एस. सी. सी. 115:[2009] 4 एस. सी. आर. 515; रूमी धर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2009) 6 एस. सी. सी. 364:[2009] 5 एससीआर 553; तमिलनाडु राज्य बनाम एन सुरेश राजन, (2014) 11 एससीसी 709:[2014] 1 एससीआर 135; बिहार राज्य बनाम रमेश सिंह, (1977) 4 एससीसी 39:[1978] 1 एस. सी. आर. 257; भारत संघ बनाम प्रफुल्ल के सामल, (1979) 3 एस. सी. सी. 4:[1979] 2 एस. सी. आर. 229; स्त्री अतिचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप एन. चोरडिया, (1989) 1 एस. सी. सी. 715:[1989] 1 एस. सी. आर. 560; निरंजन सिंह करम सिंह पंजाबी बनाम जितेंद्र बी

बिज्रया, (1990) 4 एस. सी. सी. 76:[1990] 3 एस. सी. आर. 633; दिलावर बी. कुराने बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2002) 2 एस. सी. सी. 135:[2002] 1 एससीआर 75; चित्रेश के चोपड़ा बनाम राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली सरकार), (2009) 16 एस. सी. सी. 605:[2009] 13 एससीआर 230; अमित कपूर बनाम रमेश चंदर, (2012) 9 एससीसी 460:[2012] 7 एससीआर

988; दिनेश तिवारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 13 एससीसी 137:[2014] 8 एस. सी. आर. 207; दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल बनाम गुजरात राज्य, (2019) 16 एस. सी. सी. 547:[2019] 6 एस. सी. आर. 701; राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली) बनाम शिव चरण बंसल,

(2020) 2 एससीसी 290:[2019] 17 एस. सी. आर. 1155; केपी राघवन बनाम एम. एच. अब्बास, आकाशवाणी 1967 एससी 740:1967 आकाशवाणी 740; अलमोहन दास बनाम पश्चिम बंगाल राज्य,

(1969) 2 एससीआर 520:[1969] 2 एस. सी. आर. 520; सज्जन कुमार बनाम 1073 का केंद्रीय ब्यूरो

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर.

जाँच (2010) 9 एस. सी. सी. 368:[2010] 9 एस. सी. सी. 368; गुजरात राज्य बनाम दिलीपसिंह किशोरसिंह राव, 2023 आई. एन. एस. सी. 894-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन शामिल हैं

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय:2023 की आपराधिक अपील No.3618।

2017 के सी. एन. No.4929 में इलाहाबाद, लखनऊ पीठ में उच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णय और आदेश दिनांक 02.08.2017 से।

रूप:

आलोक कुमार मिश्रा, आशुतोष लाल, प्रमोद तिवारी, विवेक तिवारी, सुश्री प्रियंका दुबे, डॉ. विनोद कुमार तिवारी, अधिवक्ता।अपीलार्थियों के लिए।आदर्श उपाध्याय, सुश्री पल्लवी कुमारी, अधिवक्ता। उत्तरदाताओं के लिए।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

न्याय

अहसानउद्दीन अमानुल्लाह, जे।

छुट्टी दे दी गई।

2. यह अपील 2017 के मामले यू/एस 482/378/407 Cr.P.C में इलाहाबाद में उच्च न्यायालय की लखनऊ पीठ द्वारा पारित अंतिम निर्णय और आदेश (जिसे इसके बाद "विवादित निर्णय" के रूप में संदर्भित किया गया है) के खिलाफ निर्देशित की गई है।

वास्तविक प्रिज्म:

3. संक्षेप में, आरोप हैं कि शिकायतकर्ता/प्रतिवादी संख्या 2 (इसके बाद "आर 2" के रूप में संदर्भित) एक हरि नारायण शुक्ला के घर में स्थित एक दुकान का किरायेदार था।आई. डी. 1 पर, अपीलकर्ताओं ने अन्य लोगों के साथ मिलकर आर 2 की दुकान का दरवाजा अंदर से बंद कर दिया, दीवार तोड़ दी और गेहूं (ए. पी. एल.) लूट लिया, बिक्री के पैसे, लगभग 21,000 रुपये मूल्य का मिट्टी का तेल, स्टॉक में सामान, दुकान के सभी रजिस्टर, दस्तावेज और एक दोपहिया वाहन।

1074

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

पंजीकरण संख्या यू. पी. 32 बी. एक्स. 2356 जिसके कारण भारतीय दंड संहिता, 1860 (इसके बाद आई. पी. सी. के रूप में संदर्भित) की धारा 448, 454 और 380 के तहत 2011 के हजरतगंज पी. एस. केस 01.07.2011 (इसके बाद "एफ. आई. आर". के रूप में संदर्भित) का आर. 2 फ़िंग हुआ।

अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुतियाँ:

4. अपीलार्थियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि एफ. आई. आर. स्वयं यह दर्शाएंगी कि आरोप (आरोप) तुच्छ प्रकृति के हैं और केवल अपीलार्थियों को उनकी संपत्ति का आनंद लेने से हतोत्साहित करने के उद्देश्य से लगाए गए हैं, जैसा कि स्वीकार किया जाता है, अपीलार्थी संख्या 2 (जिसे इसके बाद "ए 2" के रूप में संदर्भित किया गया है) ऊपर उल्लिखित दुकान का मालिक है, जो एक पंजीकृत बिक्री विलेख के माध्यम से खरीदार है।

5. अपीलार्थियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि आर 2, जिसने विचाराधीन संपत्ति का किरायेदार होने का दावा किया था, ने सिविल जज (वरिष्ठ प्रभाग) दक्षिण, लखनऊ के समक्ष स्थायी निषेधाज्ञा के लिए नियमित मुकदमा दायर किया था, जो एक तथाकथित 'किरायेदारी समझौते के ज्ञापन' दिनांक 'आईडी1' पर आधारित था, जिसमें भारतीय राष्ट्रीय रुपये का वर्तमान प्रतीक यानी ₹ दिखाया गया है, लेकिन उक्त प्रतीक केवल वर्ष 2010-1 में अस्तित्व में आया था और इस प्रकार, वर्ष 2005 के 'ज्ञापन' में प्रतिबिंबित नहीं किया जा सकता था, जो स्पष्ट रूप से दावे के झूठ को उजागर करता है। इसके अलावा, यह प्रस्तुत किया गया था कि यह एक अदालत के समक्ष एक जाली दस्तावेज की भाषा द्वारा झूठी गवाही के बराबर होगा, जिसके लिए अपीलार्थी ने दंड संहिता की धारा 340 2 के तहत एक आवेदन का नेतृत्व किया था।

1 सटीक रूप से, प्रतीक को आधिकारिक रूप से 26.08.2010 पर F.No.03/17/10-Cy., भारत सरकार, वित्त मंत्रालय, आर्थिक मामलों के विभाग (Cy. खंड)।

2 340. धारा 195 में उल्लिखित मामलों में प्रक्रिया।—(1) कब, एक आवेदन पर

इस निमित्त या अन्यथा, किसी न्यायालय की राय है कि न्याय के हित में यह समीचीन है कि धारा 195 की उप-धारा (1) के खंड (ख) में निर्दिष्ट किसी अपराध की जांच की जानी चाहिए, जो उस न्यायालय में किसी कार्यवाही में या उसके संबंध में की गई प्रतीत होती है या, जैसा भी मामला हो, उस न्यायालय में किसी कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत या दिए गए दस्तावेज के संबंध में, ऐसा न्यायालय, ऐसी प्रारंभिक जांच के बाद, यदि कोई हो, जो वह आवश्यक समझे, -

((क) उस प्रभावी अधिनियम के प्रति समर्पण को अभिलिखित करें;

(ख) लिखित रूप में इसकी शिकायत करें;

(ग) इसे अधिकार क्षेत्र वाले प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट को भेजें;

(घ) ऐसे मजिस्ट्रेट के समक्ष अभियुक्त की उपस्थिति के लिए पर्याप्त प्रतिभूति लें, या यदि कथित अपराध गैर-जमानती है और न्यायालय ऐसा करना आवश्यक समझता है, तो अभियुक्त को ऐसे मजिस्ट्रेट के पास हिरासत में भेजें; और

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, जे.] 1076

संबंधित न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया, 1973 (इसके बाद "सी. आर. पी. सी.". के रूप में संदर्भित)।

6. यह आगे प्रस्तुत किया गया कि आर 2 द्वारा 01.07.2011 पर दर्ज की गई एफ. आई. आर. आई. पी. सी. की धारा 448 3,454 4 और 380 5 के तहत कथित अपराधों के लिए थी। हालांकि, यह तर्क दिया गया कि हालांकि कोई मामला नहीं बनाया गया था, फिर भी पुलिस ने आर 2 के साथ मिलीभगत से अपीलार्थियों के खिलाफ आईपीसी की धारा 448 के तहत 2011 का आरोप पत्र प्रस्तुत किया, जिस पर अपीलार्थियों को तलब किया गया था और उन पर मुकदमा चलाया गया था। यह प्रस्तुत किया गया था कि आर 2 ने भी अतिरिक्त अदालत के समक्ष धारा 144 6, सीआरपीसी के तहत एक आवेदन का नेतृत्व किया था।

(ड) किसी भी व्यक्ति को ऐसे मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होने और साक्ष्य देने के लिए बाध्य करता है। (2) उप-धारा (1) द्वारा किसी न्यायालय को किसी अपराध के संबंध में प्रदत्त शक्ति का उपयोग, किसी भी मामले में जहां उस न्यायालय ने उस अपराध के संबंध में न तो उप-धारा (1) के तहत शिकायत की है और न ही ऐसी शिकायत करने के लिए किसी आवेदन को खारिज किया है, उस न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसके अधीन ऐसा पूर्व न्यायालय धारा 195 की उप-धारा (4) के अर्थ के भीतर अधीनस्थ है।

(3) इस धारा के तहत की गई शिकायत पर हस्ताक्षर किए जाएंगे—(ए) जहां शिकायत करने वाला न्यायालय उच्च न्यायालय है, वहां न्यायालय के ऐसे अधिकारी द्वारा, जिसे न्यायालय नियुक्त करे;

(ख) किसी अन्य मामले में, न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा या न्यायालय के ऐसे अधिकारी द्वारा जिसे न्यायालय इस संबंध में लिखित रूप में प्राधिकृत करे।

(4) इस धारा में "न्यायालय" का वही अर्थ है जो धारा 195 में है।

3 448. घर-अतिक्रमण के लिए सजा।—जो कोई भी घर में अतिचार करता है, उसे एक वर्ष तक की अवधि के लिए कारावास या एक हजार रुपये तक की अवधि के लिए कारावास या दोनों से दंडित किया जाएगा।

4 454. गुप्त रूप से घर में घुसने या घर में तोड़फोड़ करने के लिए

कारावास से दंडनीय।—जो कोई जेल से दंडनीय किसी अपराध को करने के लिए छिपे हुए घर में अतिचार या घर में तोड़-फोड़ करता है, उसे किसी भी प्रकार के कारावास से दंडित किया जाएगा जो तीन साल तक बढ़ सकता है, और वह अपराध के लिए भी उत्तरदायी होगा; और यदि अपराध करने का इरादा चोरी है, तो कारावास की अवधि दस साल तक बढ़ाई जा सकती है।

5 380. आवास आदि में चोरी—जो कोई भी किसी भी इमारत, तम्बू या बर्तन में चोरी करता है, जिस इमारत, तम्बू या बर्तन का उपयोग मानव निवास के रूप में किया जाता है, या संपत्ति की अभिरक्षा के लिए उपयोग किया जाता है, उसे किसी भी विवरण के कारावास से दंडित किया जाएगा जो सात साल तक बढ़ सकता है, और वह दंड के लिए भी उत्तरदायी होगा।

6 144. उपद्रव या संभावित खतरे के तत्काल मामलों में आदेश जारी करने की शक्ति।—(1)

जिन मामलों में, जिला मजिस्ट्रेट, उप-मंडल मजिस्ट्रेट या राज्य सरकार द्वारा विशेष रूप से सशक्त किसी अन्य कार्यकारी मजिस्ट्रेट की राय में, इस धारा के तहत कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है और तत्काल रोकथाम या त्वरित उपचार वांछनीय है, ऐसे मजिस्ट्रेट, मामले के भौतिक तथ्यों को बताते हुए एक लिखित आदेश द्वारा और धारा

134 द्वारा प्रदान किए गए तरीके से कार्य कर सकते हैं, किसी व्यक्ति को किसी निश्चित कार्य से दूर रहने या अपने कब्जे में या अपने प्रबंधन के तहत कुछ संपत्ति के संबंध में कुछ आदेश लेने का निर्देश दे सकते हैं, यदि ऐसा मजिस्ट्रेट

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

सिटी मजिस्ट्रेट (प्रथम), लखनऊ ने अपीलार्थियों के खिलाफ 2012 के मुकदमे No.01 के रूप में दर्ज किया, जिसे दिनांक 09.08.2012 के आदेश द्वारा, रखरखाव योग्य नहीं होने के कारण खारिज कर दिया गया था। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि ए 2 ने 2012 के किराया नियंत्रण मामले No.125 में उच्च न्यायालय का रुख किया और 14.12.2012 के आदेश के अनुसार, उच्च न्यायालय ने उक्त किराया नियंत्रण मामले की कार्यवाही को स्थगित रखने का निर्देश दिया।

7. विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि निचली अदालत ने प्राथमिकी में पुलिस द्वारा प्रस्तुत आरोप पत्र पर 07.08.2011 पर संज्ञान लिया, जिसके खिलाफ अपीलकर्ताओं ने धारा 482 7 के तहत उच्च न्यायालय का रुख किया।

यह मानता है कि इस तरह के निर्देश से कानूनी रूप से कार्यरत किसी भी व्यक्ति को बाधा, झुंझलाहट या चोट, या मानव जीवन, स्वास्थ्य या सुरक्षा के लिए खतरा, या सार्वजनिक शांति में गड़बड़ी, या दंगा, या टकराव को रोकने या रोकने की संभावना है।

(2) इस धारा के तहत एक आदेश, आपात स्थिति के मामलों में या उन मामलों में जहां परिस्थितियां उस व्यक्ति को, जिसके खिलाफ आदेश निर्देशित किया गया है, नोटिस के नियत समय में सेवा करना स्वीकार नहीं करती हैं, एकतरफा पारित किया जा सकता है।

(3) इस धारा के तहत एक आदेश किसी विशेष व्यक्ति को, या किसी विशेष स्थान या क्षेत्र में रहने वाले बच्चों को, या आम तौर पर किसी विशेष स्थान या क्षेत्र में बार-बार आने या जाने पर जनता को निर्देशित किया जा सकता है।

(4) इस धारा के तहत कोई भी आदेश उसके बनने से दो महीने से अधिक समय तक लागू नहीं रहेगा:

बशर्ते कि, यदि राज्य सरकार मानव जीवन, स्वास्थ्य या सुरक्षा के लिए खतरे को रोकने के लिए या किसी दंगे या किसी घटना को रोकने के लिए ऐसा करना आवश्यक समझती है, तो वह अधिसूचना द्वारा निर्देश दे सकती है कि इस धारा के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा दिया गया आदेश उस तारीख से छह महीने से अधिक की अवधि के लिए लागू रहेगा, जिस दिन मजिस्ट्रेट द्वारा दिया गया आदेश होता, लेकिन ऐसे आदेश की अवधि समाप्त हो गई, जैसा कि वह उक्त अधिसूचना में निर्दिष्ट करे।

(5) कोई मजिस्ट्रेट, या तो अपने स्वयं के प्रस्ताव पर या किसी व्यथित व्यक्ति के आवेदन पर, इस धारा के तहत अपने या अपने अधीनस्थ किसी मजिस्ट्रेट या अपने पूर्ववर्ती द्वारा किए गए किसी भी आदेश को रद्द या बदल सकता है।

(6) राज्य सरकार, या तो अपने प्रस्ताव पर या किसी व्यथित व्यक्ति के आवेदन पर, उप-धारा (4) के परन्तुक के तहत उसके द्वारा किए गए किसी भी आदेश को रद्द या बदल सकती है।

(7) जहां उप-धारा (5) या उप-धारा (6) के तहत कोई आवेदन प्राप्त होता है, मजिस्ट्रेट या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो, आवेदक को उसके सामने या उसके सामने व्यक्तिगत रूप से या वकील द्वारा उपस्थित होने और आदेश के खिलाफ कारण दिखाने का शीघ्र अवसर प्रदान करेगी और यदि मजिस्ट्रेट या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो,

आवेदन को पूरी तरह से या आंशिक रूप से अस्वीकार कर देती है, तो वह ऐसा करने के कारणों को लिखित रूप में दर्ज करेगी।

7 482. उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को बचाना।—इस संहिता में कुछ भी नहीं होगा

उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों को सीमित करने या लागू करने के लिए माना जाता है जो इस संहिता के तहत किसी भी आदेश को प्रभावी बनाने के लिए या किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक हो सकते हैं।

1077

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, जे.] 1078

सी. आर. पी. सी., केस नं. 2012 का यू/एस 482/378/407 नंबर-2413 जिसका निपटान दिनांक 10.04.2014 के आदेश के माध्यम से इस निर्देश के साथ किया गया था कि अपीलार्थी संबंधित न्यायालय के समक्ष आरोपमुक्त करने के लिए आवेदन कर सकते हैं।

8. यह प्रस्तुत किया गया था कि 18.12.2014 पर, सिविल जज (जूनियर डिवीजन), दक्षिण, लखनऊ ने विविध मुकदमे No.540031 C/2012 में, जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के तहत अपीलार्थियों के नेतृत्व में आवेदन पर स्थापित किया गया था, प्रथम दृष्टया पाया गया कि आई. पी. सी. की धारा 463 8 के तहत अपराध आर 2 द्वारा किया गया था और उसके खिलाफ कार्यवाही शुरू करने का निर्देश दिया। 9. इसके अलावा, यह बताया गया कि उच्च न्यायालय के दिनांक 10.04.2014 के आदेश के संदर्भ में, 16.01.2016 पर अपीलकर्ताओं ने 2011 के केस क्राइम No.368 में लखनऊ के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोपमुक्त करने के लिए आवेदन का नेतृत्व किया, जिसमें एक आधार सिविल जज (जूनियर डिवीजन), दक्षिण, लखनऊ द्वारा पारित 18.12.2014 का आदेश था।

10. विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि 18.12.2014 दिनांकित आदेश एक न्यायालय द्वारा एक स्पष्ट आदेश था कि पूरा मुकदमा जाली और मनगढ़ंत दस्तावेजों पर आधारित था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि एक बार यह स्थापित हो जाने के बाद, आर 2 के विचाराधीन संपत्ति के कब्जे में होने का तर्क उत्पन्न नहीं होता है और स्पष्ट रूप से एफ. आई. आर. स्वयं कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग और दुरुपयोग था। विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि आरोपमुक्त करने के लिए पर्याप्त सामग्री होने के बावजूद, निचली अदालत ने दिनांक 3 के आदेश द्वारा आवेदन को अस्पष्ट आधारों पर खारिज कर दिया और इस प्रकार, अपीलकर्ताओं को 2017 के मामले यू/एस 482/378/407 Cr.P.C में सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय का रुख करना पड़ा, जिसे विवादित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया था।

11. विद्वान वकील ने बताया कि अपीलकर्ताओं की बेगुनाही इस तथ्य से और स्थापित होगी कि आई. पी. सी. की धारा 448, 454 और 380 के तहत प्रारंभिक एफ. आई. आर. दर्ज होने के बावजूद, पुलिस ने आई. पी. सी. की धारा 454 और 380 के तहत कोई मामला दर्ज नहीं किया, जिस पर आर 2 ने न तो आपत्ति जताई और न ही आपत्ति जताई।

8 463.जालसाजी।—जो कोई भी जनता या किसी व्यक्ति को नुकसान या चोट पहुँचाने के इरादे से, या किसी भी दावे या स्वामित्व का समर्थन करने के लिए, या किसी व्यक्ति को संपत्ति से अलग करने के लिए, या किसी स्पष्ट या निहित अनुबंध में प्रवेश करने के लिए, या धोखाधड़ी करने के इरादे से या धोखाधड़ी करने के इरादे से, कोई भी गलत दस्तावेज या गलत इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड या दस्तावेज़ या इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड का हिस्सा बनाता है, वह जालसाजी करता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

फाई ने किसी भी विरोध का नेतृत्व किया। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया कि इस तथ्य की स्वीकृति कि अपराध करने के लिए कोई छिपा हुआ घर-अतिक्रमण या घर तोड़ना नहीं था, कारावास (धारा 454, आई. पी. सी.) और आवास में कोई चोरी आदि से दंडनीय है। (आई. पी. सी. की धारा 380) यह भी स्पष्ट करती है कि आर 2 के पास कभी भी विचाराधीन संपत्ति का कब्जा नहीं था और उसका पूरा मामला विफल हो जाता है। उत्तरदायी-राज्य की प्रस्तुतियाँ:

12. इसके विपरीत, राज्य के विद्वान वकील ने निष्कासन की मांग करने वाले अपीलार्थियों की प्रार्थना का विरोध किया, और विवादित निर्णय का समर्थन किया। विद्वान वकील ने अपील को खारिज करने की मांग की।

उत्तरदाता सं. 2 की गैर-उपस्थिति: 13. सेवा के बावजूद, आर 2 की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ। विश्लेषण, कारण और निष्कर्ष:

14. मामले की विस्तार से जांच करने के बाद, हस्तक्षेप का मामला बनाया गया है। तथ्य यह है कि भारतीय राष्ट्रीय रुपया प्रतीक अर्थात् ₹ उस समय अस्तित्व में नहीं था जब कथित 'ज्ञापन' पर हस्ताक्षर किए गए थे। इसके अलावा, आर 2 ने किरायेदारी के अपने पूरे दावे को एक दस्तावेज पर आधारित किया है, जो प्रथम दृष्टया जाली और मनगढ़ंत पाया गया है, जिसके लिए संबंधित अदालत ने एक आपराधिक मामला दर्ज करने का निर्देश दिया है। आर 2 द्वारा यह दिखाने के लिए कोई अन्य दावा नहीं है कि वह कब्जे में था। जब इस तथ्य के साथ जोड़ा जाता है कि पुलिस ने अपीलार्थियों के खिलाफ आई. पी. सी. की धारा 454 और 380 के तहत कोई अपराध नहीं किया है, तो अपीलार्थियों के खिलाफ आई. पी. सी. की धारा 448 के तहत मामला अस्थिर आधार पर समाप्त हो जाता है। आर 2 ने कभी भी उपरोक्त पर आपत्ति नहीं जताई और न ही आगे कोई कदम उठाया। आर 2, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ है। इस प्रकार, अपीलार्थियों के खिलाफ मामला अस्थिर आधार पर समाप्त हो जाता है। हमारा मानना है कि ए 2 निर्विवाद जमींदार होने के नाते, आर 2 के नेतृत्व में आपराधिक मामला, तथ्यों और परिस्थितियों में, न्यायालय की प्रक्रिया के स्पष्ट दुरुपयोग के बराबर है। इसके अलावा, हम यह मानते हैं कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, लखनऊ का विवादित निर्णय और दिनांक 1 का निर्णय इस बात के लिए अनुचित है कि आरोपमुक्त करने से इनकार क्यों किया जाना चाहिए। अब तक तथ्यों और गुणों पर। अब, कानून के बारे में।

15. हालाँकि तत्काल मामला मजिस्ट्रेटों द्वारा वारंट-मामलों के मुकदमे से संबंधित है और यह एक पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित मामला है, जिसका अर्थ है धारा 239-1079।

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसनूद्दीन अमानुल्लाह, जे.] 1080

240 9, सी. आर. पी. सी. प्रासंगिक है, हम धारा 245 10, सी. आर. पी. सी. (पुलिस रिपोर्ट के अलावा मजिस्ट्रेट द्वारा प्रस्तावित वारंट-मामलों के मुकदमे से संबंधित), साथ ही धारा 227-228 11, सी. आर. पी. सी., जो सत्र न्यायालय के समक्ष मुकदमे से संबंधित है, पर भी नज़र डालने का प्रस्ताव करते हैं।

9 239. जब अभियुक्त को आरोपमुक्त किया जाएगा।—यदि पुलिस रिपोर्ट और धारा 173 के तहत उसके साथ भेजे गए दस्तावेजों पर विचार करने और अभियुक्त की ऐसी जांच करने पर, यदि कोई हो, जिसे मजिस्ट्रेट आवश्यक समझता है और अभियोजन पक्ष और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के बाद, मजिस्ट्रेट अभियुक्त के खिलाफ आरोप को निराधार समझता है, तो वह अभियुक्त को आरोपमुक्त कर देगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा।

240. प्रभार की संरचना।—(1) यदि, ऐसे विचार, परीक्षा, यदि कोई हो और सुनवाई पर, मजिस्ट्रेट की राय है कि यह मानने के लिए आधार है कि अभियुक्त ने इस अध्याय के तहत विचारण योग्य अपराध किया है, जिसे ऐसा मजिस्ट्रेट आजमाने के लिए सक्षम है और जिसे उसकी राय में, उसके द्वारा पर्याप्त रूप से दंडित किया जा सकता है, तो वह अभियुक्त के खिलाफ लिखित रूप में आरोप तय करेगा।

(2) फिर आरोप को पढ़ा जाएगा और अभियुक्त को समझाया जाएगा, और उससे पूछा जाएगा कि क्या वह आरोपित अपराध के लिए दोषी है या मुकदमा चलाने का दावा करता है।

10 245. जब अभियुक्त को आरोपमुक्त किया जाएगा।—(1) यदि, सभी सबूत लेने पर

धारा 244 में निर्दिष्ट, मजिस्ट्रेट का मानना है कि अभिलिखित किए जाने वाले कारणों के लिए, अभियुक्त के खिलाफ ऐसा कोई मामला नहीं बनाया गया है जो, यदि बिना किसी संदेह के, उसकी दोषसिद्धि की गारंटी देता है, तो मजिस्ट्रेट उसे आरोपमुक्त कर देगा।

(2) इस धारा की कोई भी बात मजिस्ट्रेट को मामले के किसी भी पिछले चरण में आरोपी को आरोपमुक्त करने से रोकने वाली नहीं मानी जाएगी, यदि वह ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा दर्ज किए जाने वाले कारणों से आरोप को आधारहीन मानता है।

11 227. निर्वहन।—यदि, मामले के अभिलेख और उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करने के बाद, और इस संबंध में अभियुक्त और अभियोजन पक्ष की दलीलें सुनने के बाद, न्यायाधीश यह समझता है कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो वह अभियुक्त को आरोपमुक्त करेगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा।

228. प्रभार की संरचना।—(1) यदि, उपरोक्त रूप में ऐसे विचार और सुनवाई के बाद, न्यायाधीश की राय है कि यह मानने का आधार है कि अभियुक्त ने एक अपराध किया है जो -

(क) सत्र न्यायालय द्वारा अनन्य रूप से विचारण योग्य नहीं है, तो वह अभियुक्त के विरुद्ध आरोप तय कर सकता है और आदेश द्वारा मामले को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या प्रथम श्रेणी के किसी अन्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को स्थानांतरित कर सकता है और अभियुक्त को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या, यथास्थिति, प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष ऐसी तारीख को उपस्थित होने का निर्देश दे सकता है, जिसे वह उचित समझे, और उसके बाद ऐसा मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट-मामलों के मुकदमे की प्रक्रिया के अनुसार सुनवाई करेगा।

(ख) न्यायालय द्वारा विशेष रूप से विचारण योग्य होने पर, वह अभियुक्त के खिलाफ लिखित रूप में आरोप तय करेगा।

(2) जहाँ न्यायाधीश उप-धारा (1) के खंड (ख) के तहत कोई आरोप तय करता है, वहाँ आरोप को पढ़ा जाएगा और अभियुक्त को समझाया जाएगा, और अभियुक्त से पूछा जाएगा कि क्या वह आरोपित अपराध के लिए दोषी है या मुकदमा चलाने का दावा करता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

16. जब आरोपमुक्त करने के लिए एक आवेदन पर विचार किया जा रहा है तो अनुमत जांच की सीमा ने कई अवसरों पर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया है। इस विषय पर प्रमुख उदाहरणों पर ध्यान देना उचित है। जहां तक धारा 245, सी. आर. पी. सी. का संबंध है,

इस न्यायालय ने अजय कुमार घोष बनाम झारखंड राज्य, (2009) 14 एस. सी. सी.

115 शिक्षाप्रद है:

‘19. पुलिस रिपोर्ट के आधार पर वारंट मामले के मुकदमे में प्रक्रिया का आवश्यक अंतर और जो पुलिस रिपोर्ट के अलावा स्थापित किया गया है, विशेष रूप से एक तरफ सी. आर. पी. सी. की धारा 238 और 239 और दूसरी तरफ सी. आर. पी. सी. की धारा 244 और 245 में चिह्नित है। धारा 238 के तहत, जब पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित वारंट मामले में, आरोपी मजिस्ट्रेट के सामने पेश होता है या लाया जाता है, तो मजिस्ट्रेट को खुद को संतुष्ट करना होता है कि उसे पुलिस रिपोर्ट, प्राथमिकी, अभियोजन द्वारा जांच के लिए प्रस्तावित सभी गवाहों के सीआरपीसी की धारा 161 की उप-धारा (3) के तहत दर्ज किए गए बयान, साथ ही धारा 164 के तहत दर्ज किए गए इकबालिया बयान और बयान और कोई अन्य दस्तावेज जो अभियोजन एजेंसी द्वारा अदालत को भेजे गए हैं, जैसे आवश्यक दस्तावेज प्रदान किए गए हैं।

20. उसके बाद आरोपमुक्त करने का चरण आता है, जिसके लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 में यह प्रावधान किया गया है कि मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत उसके साथ भेजे गए दस्तावेजों पर विचार करना होगा और यदि आवश्यक हो, तो आरोपी की जांच करनी होगी और आरोपी के अभियोजन की सुनवाई करनी होगी, और यदि ऐसी जांच और सुनवाई पर मजिस्ट्रेट आरोप को निराधार समझता है, तो वह आरोपी को आरोपमुक्त कर देगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा। उस स्तर पर अभियोजन पक्ष को साक्ष्य देने की आवश्यकता नहीं होती है। यदि, उपरोक्त दस्तावेजों की जांच करने पर, वह प्रथम दृष्टया इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि मुकदमे को आगे बढ़ाने के लिए कोई आधार है, तो वह आरोप तय करने के लिए आगे बढ़ता है। आरोप तय करने के लिए, उसे एक अलग आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 240 के तहत आरोप तय किया जाता है और साक्ष्य दर्ज करने के लिए मुकदमा आगे बढ़ता है। इस प्रकार, इस तरह के मुकदमे में अभियोजन पक्ष के पास साक्ष्य देने का केवल एक ही अवसर होता है और वह भी आरोप तय होने के बाद ही आता है।

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, जे.] 1082 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 13 एस. सी. आर.

22 12. पुलिस रिपोर्ट के अलावा अन्यथा स्थापित वारंट परीक्षण में, शिकायतकर्ता को साक्ष्य देने के लिए दो अवसर मिलते हैं, पहला, आरोप तैयार करने से पहले और दूसरा, आरोप तैयार करने के बाद। बेशक, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) के तहत, एक मजिस्ट्रेट मामले के किसी भी पिछले चरण में आरोपी को आरोप मुक्त कर सकता है, अगर वह आरोप को निराधार मानता है। 23. अनिवार्य रूप से, लागू धाराएं धारा 244 और 245 सी. आर. पी. सी. हैं क्योंकि यह पुलिस रिपोर्ट के अलावा अन्यथा स्थापित वारंट परीक्षण है। अभियोजन पक्ष के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 244 (1) के तहत साक्ष्य का नेतृत्व करने या धारा 244 (2) के तहत अपने गवाहों को बुलाने का अवसर होना चाहिए था और इसके बजाय, आरोपी ने इस आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) के तहत एक आवेदन दायर किया कि आरोप निराधार था।

24. अब, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (1) और 245 (2) में स्पष्ट अंतर है। धारा 245 (1) के तहत, मजिस्ट्रेट को धारा 244 के तहत अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्य का लाभ मिलता है और उसे इस बात पर विचार करना होता है कि क्या यदि साक्ष्य अप्रमाणित रहता है, तो आरोपी को दोषी ठहराए जाने की आवश्यकता होगी। यदि साक्ष्य में कोई स्पष्ट आपत्तिजनक सामग्री नहीं है, तो मजिस्ट्रेट दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (1) के तहत आरोपी को आरोपमुक्त करने के लिए आगे बढ़ता है।

25. हालाँकि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) के तहत स्थिति अलग है। वहां, उप-धारा (2) के तहत, मजिस्ट्रेट को मामले के किसी भी पिछले चरण में आरोपी को आरोपमुक्त करने की शक्ति है, यानी इस तरह के साक्ष्य के सामने आने से पहले भी। हालांकि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) के तहत एक आरोपी को आरोपमुक्त करने के लिए, मजिस्ट्रेट को इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि आरोप निराधार है। उस स्तर पर साक्ष्य पर विचार करने का कोई सवाल ही नहीं है, क्योंकि ऐसा कुछ भी नहीं है। मजिस्ट्रेट यह निर्णय आरोपी के पेश होने या अदालत के समक्ष लाए जाने या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 244 के तहत साक्ष्य पेश किए जाने से पहले ले सकता है। "मामले के किसी भी पिछले चरण में" दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) में दिखाई देने वाले शब्द स्पष्ट रूप से इस स्थिति को सामने लाते हैं।

एक्सएक्सएक्स

12 पैराग्राफ 22 को अदालत द्वारा 22.08.2009 पर जारी आधिकारिक शुद्धिपत्र F.3/Ed.B.J./124/2009 के माध्यम से सही किया गया था।

36. मजिस्ट्रेट के पास किसी भी पिछले चरण में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) के तहत आरोपी को आरोपमुक्त करने की शक्ति है, यानी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 244 (1) के तहत साक्ष्य दर्ज करने से पहले, जो स्थापित कानून प्रतीत होता है, विशेष रूप से बंगाल क्रिकेट संघ बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1971) 3 एस. सी. सी. 239:1971 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 446], और लुइस डी पीडाडे लोबो बनाम महादेव विश्वनाथ पारुलेकर [1984 सी. आर. आई. एल. जे. 513 (बोम)] मामले में बॉम्बे उच्च न्यायालय का बाद का निर्णय। इसी निर्णय के बाद केरल उच्च न्यायालय ने मनमोहन मल्होत्रा बनाम पी. एम. अब्दुल सलाम [1994 सी. आर. आई. एल. जे. 1555 (के. आर.)] और माननीय न्यायमूर्ति के. टी. थॉमस, जैसा कि उस समय विद्वान न्यायाधीश थे, ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया कि मजिस्ट्रेट के पास किसी भी पिछले चरण में अभियुक्त को आरोपमुक्त करने की धारा 245 (2) सी. आर. पी. सी. के तहत शक्ति है। माननीय न्यायाधीश ने मोहम्मद में मद्रास उच्च न्यायालय के एक फैसले पर भरोसा किया। शेरिफ साहिब बनाम अब्दुल करीम साहिब [ए. आई. आर. 1928 मैड 129 (1)], और गोपाल चौहान बनाम सत्य [1979 सी. आर. आई. एल. जे. 446 (एच. पी.)] मामले में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय का निर्णय भी।

37. हम आश्चर्य हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245 (2) के तहत मजिस्ट्रेट किसी भी पिछले चरण में यानी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 244 (1) के तहत कोई भी सबूत दर्ज होने से पहले ही आरोपी को आरोपमुक्त कर सकता है। उस दृष्टिकोण से, अभियुक्त आवेदन कर सकता था। यह स्पष्ट है कि मजिस्ट्रेट ने आवेदन को खारिज कर दिया है। अब तक, कोई डिफ्फी कल्टी नहीं है।’

(जोर दिया गया) 17. धारा 239-240, सी. आर. पी. सी. की ओर रुख करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया

मीनाक्षी बाला बनाम सुधीर कुमार, (1994) 4 एस. सी. सी.

‘6. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जिन अपराधों के लिए तत्काल मामले में आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया था और संज्ञान लिया गया था, वे वारंट मामले के रूप में विचारणीय थे, मजिस्ट्रेट को आरोप तैयार करने के समय संहिता की धारा 239 और 240 के अनुसार आगे बढ़ना था। उपरोक्त धाराओं के तहत, मजिस्ट्रेट से पहले पुलिस रिपोर्ट और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत भेजे गए दस्तावेजों पर विचार करने और यदि वह आवश्यक समझता है तो आरोपी की जांच करने और अभियोजन पक्ष और आरोपी को सुनवाई का अवसर देने की आवश्यकता होती है। यदि इस तरह के विचार, परीक्षा और सुनवाई पर मजिस्ट्रेट आरोप को आधारहीन बनाता है तो उसे धारा 1083 के संदर्भ में आरोपी को आरोपमुक्त करना होगा।

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, जे.] 1084

239 सी. आर. पी. सी.; इसके विपरीत, यदि वह यह मानता है कि यह मानने के लिए आधार है कि अभियुक्त ने उसके द्वारा मुकदमा चलाने योग्य अपराध किया है, तो उसे सी. आर. पी. सी. की धारा 240 के संदर्भ में आरोप तय करना होगा।

7. यदि आरोप धारा 240 सी. आर. पी. सी. के अनुसार इस तथ्य पर लगाए जाते हैं कि एक प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है-जैसा कि तत्काल मामले में किया गया है-तो आरोपित व्यक्ति, यदि वह व्यथित महसूस करता है, तो उच्च न्यायालय या सत्र न्यायाधीश के पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का आह्वान कर सकता है, यह तर्क देने के लिए कि धारा 173 सी. आर. पी. सी. के तहत प्रस्तुत आरोप पत्र और इसके साथ भेजे गए दस्तावेजों में यह मानने के लिए कोई आधार का खुलासा नहीं किया गया है कि उसने कोई अपराध किया था जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है और पुनरीक्षण अदालत यदि संतुष्ट हो तो उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों को रद्द कर सकती है। इसे गलत तरीके से कहने के लिए, एक बार धारा 240 सी. आर. पी. सी. के तहत आरोप तैयार किए जाने के बाद उच्च न्यायालय अपने पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र में धारा 239 और 240 सी. आर. पी. सी. में संदर्भित दस्तावेजों के अलावा अन्य दस्तावेजों पर भरोसा करना उचित नहीं होगा और न ही धारा 482 सी. आर. पी. सी. के तहत अपने अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र को लागू करना उचित होगा, सिवाय उन दुर्लभ मामलों के जहां फॉरेंसिक आवश्यकताएं और दुर्जेय मजबूरियां इस तरह के पाठ्यक्रम को उचित ठहराती हैं। हम जल्दबाजी में यह जोड़ते हैं कि ऐसे असाधारण मामलों में भी उच्च न्यायालय केवल उन दस्तावेजों को देख सकता है जो निर्दोष हैं और जिन्हें कानूनी रूप से प्रासंगिक साक्ष्य में परिवर्तित किया जा सकता है।

8. इस मामले से निपटने में उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण में असंवेदनशीलता के अलावा, जो हम पहले ही देख चुके हैं, हम आगे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 और 240 में निर्दिष्ट दस्तावेजों पर अपना ध्यान केंद्रित करने के बजाय उच्च न्यायालय ने अपने-अपने संबद्ध पक्षों के माध्यम से उठाए गए प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विस्तार से विचार किया है और उनकी विस्तृत चर्चा पर विवादित आदेश पारित किया है। इस प्रकार अपनाए गए पाठ्यक्रम का समर्थन नहीं किया जा सकता है; प्रथमतः, क्योंकि अपराध करने के संबंध में निर्णय साक्ष्य के आधार पर दर्ज नहीं किया जा सकता है और दूसरा, क्योंकि आरोप तैयार करने के चरण में न्यायालय मामले के संबंधित गुण-दोषों पर विचार करने और निर्णय लेने के लिए निचली अदालत के कार्यों को हड़प नहीं सकता है।'

(जोर दिया गया) 18. हम बड़े सम्मान के साथ, ऊपर जो कहा गया है उसे पूरी तरह से स्वीकार करने में अपनी आपत्ति व्यक्त करते हैं। यदि मीनाक्षी बाला का अनुच्छेद 8 (ऊपर)

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 13 एस सी आर।

जैसा है वैसा ही स्वीकार किया जाता है, आवश्यक सहवर्ती यह होगा कि मामले की विस्तार से जांच करने के बावजूद, एक न्यायालय मध्यस्थता करने के लिए अपने पंखों को कटा हुआ पाएगा। यह एक

व्यक्ति को मुकदमे का सामना करने के लिए मजबूर करने के बराबर होगा, तब भी जब भारी सामग्री उसकी निर्दोषता की ओर इशारा करती है। जाहिर है, न्यायालय के हाथों को बांधना नहीं चाहिए, और विशेष रूप से उच्च न्यायालय द्वारा नहीं, और अधिक स्वतंत्रता के खिलाफ नहीं होना चाहिए। मीनाक्षी बाला (ऊपर) का अनुच्छेद 7 निर्विवाद दस्तावेजों की जांच करने में सक्षम बनाता है। हम इस बात से अवगत हैं कि अदालत ने बाद के फैसलों में मीनाक्षी बाला (उपरोक्त) का पालन किया है। हालाँकि, हमने उदाहरणों का आगे सर्वेक्षण करने के लिए चुना है, और फिर यह तय करते हैं कि हम 13 को किस रास्ते पर ले जाना चाहते हैं।

19. रूमी धार बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2009) 6 एस. सी. सी. 364 में, यह न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायाधीश धारा के तहत एक आवेदन से संबंधित है

239, सी. आर. पी. सी. को प्रत्येक अभियुक्त व्यक्ति के खिलाफ लगाए गए आरोपों के विवरण में जाना होगा ताकि यह राय बनाई जा सके कि क्या कोई मामला इसके संबंध में एक मजबूत संदेह के रूप में बनाया गया है या नहीं, यह कानून की आवश्यकताओं को पूरा करेगा।'

20. तमिलनाडु राज्य बनाम एन सुरेश राजन, (2014) 11 एससीसी

709, यह देखा गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 और 239 की भाषा में अंतर के बावजूद, संबंधित न्यायालय का दृष्टिकोण दोनों प्रावधानों के तहत समान होना चाहिए। धारा 227 और 228, सी. आर. पी. सी. के तहत इस क्षेत्र को धारण करने वाले सिद्धांत अच्छी तरह से तय किए गए हैं, शिष्टाचार, अन्य बातों के साथ-साथ,

बिहार राज्य बनाम रमेश सिंह, (1977) 4 एस. सी. सी. 39; भारत संघ बनाम प्रफुल्ल के सामल, (1979) 3 एस. सी. सी. 4; स्त्री अतिचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप एन. चोरडिया, (1989) 1 एस. सी. सी. 715; निरंतर सिंह करम सिंह पंजाबी बनाम जितेंद्र बी. बिज्रया, (1990) 4 एस. सी. सी. 76; दिलावर बी. कुराने बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2002) 2 एस. सी. सी. 135; चित्रेश के. चोपड़ा बनाम राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली सरकार), (2009) 16 एस. सी. सी. 605; अमित कपूर बनाम रमेश चंदर, (2012) 9 एस. सी. सी. 460; दिनेश तिवारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2014) 13 एस. सी. सी. 137; दीप

शिव चरण बंसल, (2020) 2 एससीसी 290। हमें केवल कुछ का उल्लेख करने की आवश्यकता है, प्रफुल्ल के सामल (सुप्रा) से शुरू करते हुए, जहां, विचार करने के बाद

रमेश सिंह (ऊपर), केपी राघवन बनाम एम. एच. अब्बास, ए. आई. आर. 1967 एस. सी.

13 हां, संकेत रॉबर्ट फ्रॉस्ट की प्रसिद्ध कविता-द रोड नॉट टेकन के लिए है।

इसे निम्नानुसार निर्धारित किया गया था:

‘10. इस प्रकार, ऊपर उल्लिखित अधिकारियों पर विचार करने पर, निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैं:

(1) कि न्यायाधीश के पास संहिता की धारा 227 के तहत आरोप तैयार करने के प्रश्न पर विचार करते समय यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए साक्ष्य की छान-बीन करने और तौलना करने की निस्संदेह शक्ति है कि अभियुक्त के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है या नहीं।

(2) जहाँ न्यायालय के समक्ष रखी गई सामग्री अभियुक्त के खिलाफ गंभीर संदेह का खुलासा करती है जिसे ठीक से समझाया नहीं गया है, वहाँ न्यायालय को आरोप तैयार करने और मुकदमे के साथ आगे बढ़ने में पूरी तरह से न्यायसंगत ठहराया जाएगा।

(3) प्रथम दृष्टया मामला निर्धारित करने के लिए परीक्षण स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा और सार्वभौमिक अनुप्रयोग का नियम निर्धारित करना मुश्किल है। तथापि, यदि मोटे तौर पर दो विचार समान रूप से संभव हैं और न्यायाधीश को संतुष्ट किया जाता है कि उसके समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य अभियुक्त के खिलाफ कुछ संदेह को जन्म देते हुए लेकिन गंभीर संदेह को जन्म नहीं देते हैं, तो वह पूरी तरह से अभियुक्त को दोषमुक्त करने के अपने अधिकार के भीतर होगा।

(4) कि संहिता की धारा 227 के तहत अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए न्यायाधीश, जो वर्तमान संहिता के तहत एक वरिष्ठ और अनुभवी अदालत है, केवल एक डाकघर या अभियोजन पक्ष के मुखपत्र के रूप में कार्य नहीं कर सकता है, लेकिन उसे मामले की व्यापक संभावनाओं, साक्ष्य और अदालत के समक्ष पेश किए गए दस्तावेजों के कुल प्रभाव, मामले में दिखाई देने वाली किसी भी बुनियादी जानकारी आदि पर विचार करना होगा। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि न्यायाधीश को मामले के पक्ष और विपक्ष की बारी-बारी से जांच करनी चाहिए और सबूतों को ऐसे तौलना चाहिए जैसे कि वह मुकदमा चला रहा हो।’

(जोर दिया गया)

21. निरंजन सिंह करम सिंह पंजाबी (ऊपर) में, यह न्यायालय

वास्तविकता के लिए जीवित था, यह कहते हुए कि ‘. यह प्रारंभिक चरण में भी उन सभी को स्वीकार करने की उम्मीद नहीं की जा सकती है जिन्हें अभियोजन पक्ष सुसमाचार सत्य के रूप में बताता है, भले ही वह है

सामान्य ज्ञान या मामले की व्यापक संभावनाओं के खिलाफ।’ अगर एक दृश्य

संदेह को जन्म देता है, गंभीर संदेह के विपरीत, संबंधित न्यायालय को अभियुक्त को आरोपमुक्त करने का अधिकार है, जैसा कि सज़न कुमार बनाम

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, **(2010) 9 एस. सी. सी. 368**। अदालत, दिनेश में

तिवारी (ऊपर) ने तर्क दिया था कि यदि संबंधित अदालत का मानना है कि यह मानने का आधार है कि आरोपी ने अपराध किया है, तो वह आरोप तय करने में सक्षम है, भले ही आरोप पत्र में इस तरह के अपराध का उल्लेख न हो। जहां तक 'मजबूत संदेह' का सवाल है, दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल (ऊपर) का संदर्भ आवश्यक है, जहां यह समझाया गया था कि यह है।

जो कुछ ऐसी सामग्री पर आधारित है जो अदालत के समक्ष खुद को इस प्रथम दृष्टया दृष्टिकोण पर विचार करने के लिए पर्याप्त मानती है कि आरोपी ने अपराध किया है।'

22. हाल के एक फैसले में। गुजरात राज्य बनाम दिलीपसिंह किशोरसिंह

राव, **2023** आई. एन. एस. सी. **894 14**, इस न्यायालय ने निर्णय दिया:

'7. यह साधारण कानून है कि न्यायिक दिमाग का उपयोग यह निर्धारित करने के लिए आवश्यक है कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा मुकदमे के साथ आगे बढ़ने के लिए कोई मामला बनाया गया है और जब आरोपमुक्त करने के लिए आवेदन किया जाता है तो आरोपी के बचाव की जांच करके मामले के पक्ष और विपक्ष में ध्यान देना आवश्यक नहीं होगा। उस स्तर पर, विचारण न्यायाधीश को केवल अभियोजन पक्ष द्वारा रखे गए साक्ष्य की जांच करनी होती है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि आरोप पत्र सामग्री के आधार पर अभियुक्त के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए आधार पर्याप्त हैं या नहीं। जाँच एजेंसी द्वारा अभिलिखित या एकत्र किए गए साक्ष्य या प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों की प्रकृति जिसमें प्रथम दृष्टया यह पता चलता है कि अभियुक्त के खिलाफ संदिग्ध परिस्थितियाँ हैं, ताकि आरोप तय करने के लिए पर्याप्त हो और आरोप तैयार करने के उद्देश्यों के लिए ऐसी सामग्री को ध्यान में रखा जाएगा। यदि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही के लिए आवश्यक रूप से कोई पर्याप्त आधार नहीं है, तो अभियुक्त को आरोपमुक्त कर दिया जाएगा, लेकिन यदि अदालत की राय है, तो सामग्री पर इस तरह से विचार करने के बाद यह मानने के लिए आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है जो विचारण योग्य है, तो अनिवार्य रूप से आरोप तैयार किया जाना चाहिए।

14 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1294।

1087

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, जे.] 1088 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 13 एस. सी. आर.

8. आरोप तय करने और संज्ञान लेने के समय अभियुक्त को कोई सामग्री पेश करने और अदालत से इसकी जांच करने का आह्वान करने का कोई अधिकार नहीं है। संहिता में कोई भी प्रावधान अभियुक्त को आरोप तय करने के चरण में किसी भी सामग्री या दस्तावेज को दर्ज करने

का कोई अधिकार नहीं देता है। निचली अदालत को मामले के तथ्यों पर अपने न्यायिक दिमाग को लागू करना होता है जो यह निर्धारित करने के लिए आवश्यक हो सकता है कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा केवल आरोप पत्र सामग्री के आधार पर मुकदमे के लिए कोई मामला बनाया गया है।

9. यदि अभियुक्त आरोप-पत्र सामग्री से आरोप-पत्र तैयार करने के चरण में प्रदर्शन करने में सक्षम है जो मामले की स्थिरता को काफी प्रभावित कर सकता है, तो यह सुझाव देना अनुचित है कि अदालत द्वारा उस स्तर पर ऐसी सामग्री पर विचार या उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। आई. पी. आर. की धारा 227 के तहत अभियुक्त को प्रस्तुत करने का मौका देने का मुख्य इरादा। पी. सी. को यह निर्धारित करने में अदालत की सहायता करनी है कि मुकदमा चलाने के लिए आगे बढ़ने की आवश्यकता है या नहीं। संहिता में कुछ भी ऐसी सुनवाई के दायरे को केवल मौखिक सुनवाई और मौखिक तर्कों तक सीमित नहीं करता है और इसलिए, निचली अदालत आई. ओ. के समक्ष आरोपी द्वारा प्रस्तुत सामग्री पर विचार कर सकती है।

10. यह कानून का तय सिद्धांत है कि आरोपमुक्त करने के लिए एक आवेदन पर विचार करने के स्तर पर अदालत को इस धारणा पर आगे बढ़ना चाहिए कि अभियोजन पक्ष द्वारा रिकॉर्ड में लाई गई सामग्री सही है और यह निर्धारित करने के लिए उक्त सामग्री का मूल्यांकन करना चाहिए कि क्या सामग्री से सामने आने वाले तथ्य उसके अंकित मूल्य पर लिए गए हैं या नहीं, जो कथित अपराध के लिए आवश्यक सामग्री के अस्तित्व का खुलासा करते हैं।...

XXX

11. अभियुक्त के बचाव को उस स्तर पर नहीं देखा जाना चाहिए जब अभियुक्त आरोपमुक्त होना चाहता है। आई. पी. आर. की धारा 227 में "मामले का अभिलेख" अभिव्यक्ति का उपयोग किया गया है। पी. सी. को अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों और लेखों, यदि कोई हों, के रूप में समझा जाना चाहिए। संहिता अभियुक्त को आरोप तय करने के चरण में कोई दस्तावेज पेश करने का कोई अधिकार नहीं देती है। अभियुक्त के प्रस्तुतिकरण को जाँच एजेंसी द्वारा प्रस्तुत सामग्री के साथ जोड़ा जाना है। 12. आरोप तय करने के चरण में प्राथमिक विचार एक प्रथम दृष्टया मामले के अस्तित्व का परीक्षण है, और इस स्तर पर, संभावित

अभिलेख पर सामग्री के मूल्य में जाने की आवश्यकता नहीं है। इस न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य बनाम सोमनाथ थापा, (1996) 4 एस. सी. सी. 659 और एम. पी. राज्य बनाम मोहन लाल सोनी, (2000) 6 एस. सी. सी. 338 में अपने पहले के फैसलों का उल्लेख करते हुए माना है कि आरोप तय करने के चरण में न्यायालय द्वारा किए जाने वाले मूल्यांकन की प्रकृति प्रथम दृष्टया मामले के अस्तित्व का परीक्षण करना है। यह आरोप तय करने के चरण में भी आयोजित किया जाता है, अदालत को कथित तथ्य का गठन करने वाले तथ्यात्मक तत्वों के अस्तित्व के लिए एक अनुमानित राय बनानी होती है और यह उम्मीद नहीं की जाती है कि वह अभिलेख पर

सामग्री के संभावित मूल्य में गहराई से जाए और यह जांच करे कि क्या अभिलेख पर सामग्री निश्चित रूप से मुकदमे के समापन पर दोषसिद्धि का कारण बनेगी।’

(जोर दिया गया) 23। कानूनी स्पेक्ट्रम के सावधानीपूर्वक निरीक्षण पर, यहां पहले व्यक्त किए गए तथ्यों और गुणों पर हमारे दृष्टिकोण के साथ, हम संतुष्ट हैं कि कोई संदेह नहीं है, बहुत कम मजबूत या गंभीर संदेह है कि अपीलार्थी कथित अपराध के दोषी हैं। इस पृष्ठभूमि में अपीलार्थियों को पूर्ण रूप से आपराधिक मुकदमे का सामना करना पड़ना अनुचित होगा। सी. आर. पी. सी. की धारा 482 के तहत एक एफ. आई. आर. को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय के इनकार से निपटने वाली एक अपील में, हालांकि, इस न्यायालय ने उसमें आक्षेपित निर्णय को दरकिनार करते हुए और उस एफ. आई. आर. को रद्द करते हुए यह विचार रखा कि ‘

तंग करने वाले और अनुचित आपराधिक अभियोजन के खिलाफ और अनावश्यक रूप से अंतिम मुकदमे की कठोरता के माध्यम से रखे जाने से संरक्षित किया जाए।’ 15

परेशान करने वाले और अवांछित अभियोजन के खिलाफ संरक्षण और एक आपराधिक कार्यवाही को गुमनामी में पिघलाकर मुकदमे के माध्यम से अनावश्यक रूप से घसीटे जाने से, या तो एक प्राथमिकी/शिकायत को रद्द करके या आरोपमुक्त करने से इनकार करने वाले आदेश के खिलाफ अपील की अनुमति देकर या किसी अन्य कानूनी रूप से अनुमेय मार्ग से, जैसा भी परिस्थितियां हों, उच्च न्यायालयों पर एक कर्तव्य है। उच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करना चाहिए था और अपीलार्थियों को आरोपमुक्त कर देना चाहिए था। लेकिन यह न्यायालय हस्तक्षेप करेगा, क्योंकि यह इस मामले का प्रहरी है। 24. तदनुसार, इस अपील की अनुमति दी जाती है। अपीलार्थी, जमानत पर, अपने जमानत बांड की देनदारियों से मुक्त हो जाते हैं। उच्च न्यायालय के विवादित निर्णय के साथ-साथ प्रार्थना को खारिज करने वाले निचली अदालत के आदेश

15 प्रियंका मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2023 आईएनएससी 729। 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी

978.

1089

विष्णु कुमार शुक्ला और ए. एन. आर. बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ए. एन. आर. [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह, जे।]

निर्वहन के लिए अलग रखा जाता है। नतीजतन, उनके खिलाफ आगे बढ़ने के लिए रिकॉर्ड पर पर्याप्त सामग्री नहीं होने के कारण, अपीलार्थी आपराधिक मामले में बरी हो जाते हैं। हमारा निर्णय निजी पक्षों के बीच लंबित दीवानी कार्यवाही (ओं), यदि कोई हो, को प्रभावित नहीं करेगा।

25. जहां तक मीनाक्षी बाला (उपरोक्त) का संबंध है, यह विचार रखते हुए कि हमने सीमित पहलू पर अपनी शंका व्यक्त की है, फिर भी हमें इस मोड़ पर उक्त निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए एक बड़ी पीठ पर बोझ डालने की कोई आवश्यकता नहीं है। ‘एक अधिक उपयुक्त मामले में.’, शायद, जैसा कि कहा जाता है।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोटः

अपील की अनुमति दी गई।

निधि जैन